Name :- Dr. Jaya
Guest faculty
Date :- 09/05/2020 Deptt. of Sociology
B.A Part I (Hons.), Paper-2
Unit - 6,
Lecture Series :- 36

वर्ग - संघर्ष के सिद्धांत में मार्क्स ने सामाजिक वर्ग की अवधारणा तथा वर्ग संघर्ष की सार्वभौमिकता को ऐतिहासिक आधार पर स्पष्ट करने के साथ ही पूँजीवादी व्यवस्था में वर्ग संघर्ष की प्रक्रिया तथा इसके कारणों का विस्तार से स्पष्ट किया है। इस व्यवस्था में थोड़े से पूँजीपति श्रमिकों के एक बड़े वर्ग का मनमाना शोषण कर रहे थे। पूँजी तथा उत्पादन के साधनों पर अपने स्वामित्व के कारण राजनीति पर भी उनका प्रभुत्व इस तरह बढ़ने लगा था कि राज्य के कानून भी उन्हीं के पक्ष में थे। स्थिति में मार्क्स ने उन दशाओं का उल्लेख किया जो सर्वहारा वर्ग को संगठित करके उनमें वर्ग-संघर्ष की चेतना उत्पन्न करती है। इसके साथ ही वर्ग-संघर्ष के द्वारा मार्क्स का उद्देश्य यह स्पष्ट करना भी था कि पूँजीपति तथा सर्वहारा वर्ग के बीच उत्पन्न होने वाले संघर्ष का अंत क्रांति के रूप में होना अनिवार्य है जिसके बाद उत्पादन के साधनों तथा राजनीतिक सत्ता पर श्रमिक वर्ग का पूर्ण अधिकार हो जायेगा। इस प्रकार मार्क्स ने पूँजीवादी व्यवस्था की आलोचना तथा सर्वहारा वर्ग की बढ़ती हुई शक्ति का विश्लेषण करने के लिए ही वर्ग-संघर्ष के सिद्धांत को स्पष्ट किया। उनके इस सिद्धांत से संबंधित प्रमुख दशाओं को एक क्रम में निम्नांकित रूप से समझा जा सकता है :—

Scanned by CamScanner

1) संपत्ति का महत्व :- मार्क्स के अनुसार किसी भी समाज की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता उसमें संपत्ति का एक विशेष स्थान है तथा संपत्ति के साथ स्थापित होने वाले व्यक्तियों के संबंधों के आधार पर ही उनके व्यवहारों को समझा जा सकता है। इसका तात्पर्य है कि समाज में वर्गों का निर्माण उत्पादन के साधनों के साथ व्यक्तियों द्वारा स्थापित होने वाले संबंधों के आधार पर ही होता है। उन्होंने बताया कि समाज में वर्गों का निर्माण व्यावसायिक व्यवसायिक विभाजन के आधार पर नहीं होता बल्कि उत्पादन के साधनों से बनने वाले संबंध ही वर्ग-विभाजन का आधार है। जिस वर्ग के पास उत्पादन के साधनों का स्वामित्व होता है उसकी सामाजिक, राजनीतिक तथा वैधानिक स्थिति उन लोगों से भिन्न हो जाती है जो उत्पादन के साधनों से वंचित होते हैं।

2) सर्वहारा वर्ग का विकास :- वर्ग संघर्ष की पहली दशा सर्वहारा वर्ग के विकास से आरंभ होती है। मार्क्स ने कहा है कि एक स्थान पर बड़ी मात्रा में उत्पादन होने से वहाँ श्रमिकों की एक ऐसी भीड़ एकत्रित हो जाती है जिसमें सभी एक-दूसरे के लिए अपरिचित होते हैं। प्रतियोगिता के कारण उनके हित भी पृथक-पृथक रहते हैं लेकिन मजदूरी के प्रश्न को लेकर उनमें विचारों की एकता पैदा होती है जिसके कारण वे संघ जुड़ने लगते हैं। ऐसी संयुक्तता का उद्देश्य एक ओर अपनी आपसी प्रतियोगिता को रोकना

तथा इसकी और, पूँजीपति वर्ग से प्रतियोगिता करने के लिए स्वयं को संगठित करना होता है। इस प्रकार, पूँजीवाद से संबंधित आर्थिक दशाएं ही श्रमिकों का एक वर्ग के रूप में संगठित करके उन परिस्थितियों को जन्म देती हैं जिनसे धीरे-धीरे सर्वहारा वर्ग में एक विशेष चेतना विकसित होने लगती है।

3) आर्थिक शक्ति से राजनीतिक शक्ति का प्रादुर्भाव — यद्यपि वर्गों का निर्माण उत्पादन की शक्तियों तथा उत्पादन के संबंधों के आधार पर होता है, लेकिन जब उत्पादन के साधनों पर पूँजीपतियों का अधिकार हो जाता है, तब अपनी राजनीतिक शक्ति को बढ़ाकर वे श्रमिकों का और अधिक शोषण करने लगते हैं। पूँजीपति वर्ग राज्य का उपयोग अपने हितों को सुरक्षित रखने तथा श्रमिकों का आर्थिक शोषण करने के साधन के रूप में करने लगता है। इस प्रकार पूँजीवादी समाज में पूँजीपति अथवा बुर्जुआ वर्ग की आर्थिक शक्ति धीरे-धीरे राजनीतिक शक्ति के रूप में बदलने लगती है। मार्क्स का विचार है कि पूँजीपति वर्ग की आर्थिक शक्ति से जब उन्हें राजनीतिक शक्ति भी प्राप्त हो जाती है, तब न्यायालय, पुलिस तथा प्रशासनिक अधिकारी भी पूँजीपतियों के हितों को ही सुरक्षित रखने के लिए कार्य करने लगते हैं। यह सभी दशाएं श्रमिक वर्ग के शोषण में वृद्धि करने लगते हैं।

4) वर्गों का ध्रुवीकरण ! — मार्क्स के अनुसार

की बढ़ती हुई प्रवृत्ति है। यह ध्रुवीकरण एक दूसरे के विरुद्ध संगठित होने वाले दो प्रमुख वर्गों अर्थात् बुर्जुआ वर्ग तथा सर्वहारा वर्ग के रूप में देखने को मिलता है। यह मार्क्स ने कहा है कि जैसे-जैसे पूंजीपति तथा श्रमिक वर्ग में वर्ग चेतना और एक-दूसरे के प्रति विरोध बढ़ता है, छोटे पूंजीपति व्यावसायिक प्रतिस्पर्द्धा न कर पाने के कारण अपनी संपत्ति से वंचित होकर स्वयं भी सर्वहारा वर्ग का अंग बनने लगते हैं। जिसे सर्वहाराकरण या (Proletarianization) के नाम से जाना जाता है। वर्ग चेतना के कारण श्रमिकों के छोटे-छोटे संगठन भी बड़े श्रमिक संगठनों में अपना विलय करने लगते हैं। इस प्रकार एक ओर कुछ बड़े पूंजीपतियों के हाथों में पूंजी का केन्द्रीकरण होने लगता है तो दूसरी ओर सर्वहारा वर्ग के सदस्यों की संख्या बढ़ने लगती है। जैसे-जैसे वर्गों का ध्रुवीकरण बढ़ता है, उनके बीच आर्थिक और राजनीतिक प्रभुत्व स्थापित करने के लिए संघर्ष भी तेज होने लगता है।

5) पूंजीपति वर्ग द्वारा अतिरिक्त मूल्य का संचय — वर्गों के ध्रुवीकरण से पूंजीपतियों द्वारा श्रमिकों का अधिक से अधिक शोषण करके अपने लाभ को बढ़ाने की प्रवृत्ति प्रबल होने लगती है। इसके लिए वे श्रमिकों से अतिरिक्त श्रम लेकर अतिरिक्त मूल्य का संचय करने लगते हैं। अतिरिक्त मूल्य इन दो

Scanned by CamScanner